अध्याय - दुसरा

मुद्रणतंत्रज्ञान एवं पाठयपुस्तक तंत्रज्ञान

२.१ प्रस्तावना ।

२.२ मुद्रणतंत्रज्ञान का इतिहास।

२.३ क्रमिक पुस्तक का निर्माण और वितरण इसके बारे में कोबायशीजी ने बताए हुए मुख्य १२ सोपान।

२.४ पाठयपुस्तक तंत्रज्ञान में हुई तरक्की।

२.४.१. मुद्रित साहित्य का बाह्यांग।

२.४.२. मुद्रित अनुस्थापन की पहचान।

२.४.३. सामान्य उद्दिपक के लिए मुद्रित साहित्य।

२.४.४. गणितीय क्रिया।

२.४.५. वाचक के लक्षण।

२.४.६. वाचन फल।

२.५ उपसंहार।

अध्याय दुसरा

मुद्रणतंत्रज्ञान एवं पाठयपुस्तक तंत्रज्ञान।

२.१ प्रस्तावना -

आज के युग को संगणक युग कहा जाता है। आज संगणक और उपग्रह के माध्यम सें विचारों का आदान-प्रधान होता है। सभी क्षेत्रों में आज प्रगत और शक्तिशाली तंत्रों का प्रयोग किया जाता है। आज हाईस्कूलों में संगणक के द्रारा छात्रों को शिक्षा दी जा रही है, फिर भी कक्षा में अध्यापन कार्य करते समय मुद्रित साहित्य का प्रयोग काफी मात्रा में होता है। आज के इस संगणक युग में भी पाठयपुस्तक अपना अलग महत्व रखता है। छात्रों के लिए पाठयपुस्तक एक अनिवार्य साधन है। पाठयपुस्तक के द्वारा होनेवाला प्रभाव, होनेवाले वाड़मयीन संस्कार और होनेवाले जीवन साक्षात्कार स्थायी माना जाता है।

मुद्रण तंत्रज्ञान में हो गई तरक्की और पाठयपुस्तक तंत्रज्ञान में हो गई तरक्की आज पाठयपुस्तक साहित्य के ओर जाने के लिए हमे मदद करती है। आज मुद्रण तंत्रज्ञान और पाठयपुस्तक तंत्रज्ञान बहुत ही विकसित हो गया है। आज मुद्रण तंत्रज्ञान में लिनो टाईप मशिन का प्रयोग होने लगा है। इलेक्ट्रॉनिक संगणक के माध्यम से लेखक स्वयं हस्तलेख निर्माण करके Word Processing के माध्यम से हस्तलेख संगणक डिस्क के द्वारा प्रकाशक के संगणक के पास टेलिफोन के सहाय्यता से भेज सकता है और संगणक यह हस्तलेख मुद्रित करके पाठयपुस्तक या मासिक अलग-अलग रंग में निर्माण कर सकता है।

'शैक्षिक तकनिकी' इस संज्ञा का प्रचलन होने से पूर्व क्रमिक पुस्तक और मुद्रित साहित्य का प्रयोग होता आ रहा है। मुद्रित माध्यमों को शैक्षिक तकनिकी का एक अंग माना जाता है। मुद्रण तकनिकी में और क्रमिक पुस्तकों के तकनिकी में हुई तरक्की हमें क्रमिक साहित्य के तंत्रज्ञान की ओर ले जाने में सहाय्यक सिध्द हुई है।

२.२ मुद्रणतंत्रज्ञान का इतिहास -

इ.स. दुसरी सदी के अन्त में चिनी लोगों ने स्वयं अनुभवों के द्वारा अक्षरों को मुद्रित करने का प्रयास किया। अक्षरों को मुद्रित करने के लिए जिन चिजों की आवश्यकता थी, उन चिजों की पूर्ति आसानी से उसी समय में हो गयी थी। चिनी लोगों ने पहले-पहले संगमर्भर पत्थर के उपर अक्षरों का निर्माण किया यह काम थोडा कठिन होने के कारण उन्होने बाद में लकडी के कुंदे पर अक्षरों का निर्माण करना शुरु किया। लकडी के बुंदे पर अक्षरों का निर्माण करना आसान हो गया था।

धीरे-धीरे इसी पध्दति के अनुसार बाद में युरोप में चमड़ी पर अक्षरों का निर्माण होने लगा। चौदवी शताब्दी में यह काम युरोप में होने लगा। उसी समय -हाईन नदी के तट पर बुर्गडीयन प्रदेश में फ्लँडर्स में इस प्रकार के छपाई के प्रमुख केद्रों का निर्माण हुआ। इन केंद्रों में संत लोगों के चित्रों का तथा संत लोगों के नाम और प्रतिज्ञाओं का मुद्रण होने लगा। पंधरावी सदी में उन पुस्तकों को 'ब्लॉक बुक्स' के नाम से जाना जाता था। लकडी के क्रुंदे पे और चमड़ी पे अक्षरों का निर्माण करना यह पध्दति बहुत कष्ट प्रद होनें लगी।

-हाईन और मेन नदीयों के संगम पे 'मेझ' नाम का एक शहर है। उसी शहर में जोहान गुटेनबर्ग नाम का एक सुनार रहता था। गुटेनबर्ग को सुतार काम में खास तौर पर किंमती अलंकारों के उपर छोटे-छोटे अक्षरों को निकालने का अनुभव था। धीरे-धीरे गुटेनबर्ग ने अक्षरों के किले बनाएँ और बाद में उन्होने अक्षरों के ढ़ाँचे बनाएँ। गुटेनबर्ग ने पितल के धातु पर अक्षरों के ढ़ाँचे बनाए। सच माना जाय तो अक्षरों को मुद्रित करने का शोध कार्य गुटेनबर्ग ने किया। उसी समय में 'पेटंट कानून' होने के कारण इस खोज के बारे में किसीने जानकारी नहीं दी। पेटंट कानुन के मुताबिक इसकी जानकारी देना गुनाह था। इसी वजह से गुटेनबर्गनेयह शोधकार्य कब किया इसके बारे में निश्चित रुप से जानकारी नहीं मिलती है।

युरोप में गुटेनबर्ग ने मुद्रण कला की खोज़ की यह जानते हुए भी कोलोन में 'अल्ट्रिच झेल' के जानकारी से मुद्रण कला की खोज़ पहले-पहले 'हॉलंड में' हुअी ऐसा कुछ लोग मानते हैं। इस प्रकार मुद्रण कला का आरंभ हुआ और बाद में युरोप में उसका धीरे-धीरे प्रसार हो गया। शुरु में मुद्रण कौशल सिर्फ जर्मन लोगों को ही मालूम था ऐसा कुछ लोगों का कहना है। जॉन न्युमेस्टर जैसे लोग जर्मन से बाहर गये और सन १४७० में 'फॉलिग्रो' शहर में मुद्रण का काम करने लगे। इस प्रकार अलग-अलग शहरों में मुद्रण व्यवसाय स्थिर हो गया,लेकिन इसके बारे में निश्चित समय बताना कठिन काम है। सन १४६० के बीच में 'मैझ' में मुद्रण तंत्रज्ञान की यह कला बहुत ही विकसित हो गयी थी। उसी के दरमियान 'स्ट्रॅसबर्ग' में जोहान मेटेलिनने ही अपना छापख़ाना स्थापित किया था। उन्होने जर्मन और लॅटिन भाषा में बायबल छपवाया और देशी भाषा में भी मुल ग्रंथों का निर्माण किया।

सन १४६० के बीच में गुटेनबर्ग और शॉकर के साथीयों ने भी जर्मन के अनेक शहरों में छापख़ानों की निर्मिती की। हनाऊशहर के डररिच झेलने सन १४६४ में कोलोन में छापख़ाना शुरु किया। सन १४६६ में बेरथोल्ड रुपल ने बॅसल शहर में और गुंथर झैनर ने सन १४६८ में ऑग्सबर्ग में छपाख़ाना शुरु किया। जोहान सेन्सेनश्मिल्टझने १४७० में न्युरेम्बर्ग शहर में छापाख़ाना स्थापन किया। धीरे-धीरे सन १४७० के दरमियान मुल स्वरुप में मुद्रण साहित्य दक्षिण देशों मे विकसित हो गया। सन १४७६ में इंग्लंड में मुद्रण तंत्रज्ञान का प्रवेश हो गया।

भारत में सबसे पहले पोर्तुगीज लोगोने सन १५५६ में गोवा में अपने धर्म का प्रसार करने के लिए छापाख़ाना शुरु किया। पोर्तुगीज लोगों ने ख्रिश्चन मिशनरीयों के कार्य का प्रसार करना गोवा में शुरु किया। लगबग दो शताब्दी तक मुद्रण व्यवसाय ख्रिस्ती लोगों के हात में उस जमाने में था। उन्होने इस मुद्रण कला का प्रसार पश्चिम किनारपट्टी के प्रदेशों में किया। पोर्तुगीज लोगोने मलबार में अक्षरों के किले तयार करने की पहली फौंड्री बनाई। सन १७१३ में 'ईस्ट इंडिया कंपनी' को यह बात ज्ञान हो गयी की यदि भारत में शासन प्रबंध ठिक करना है, तो भारतीय लोगों को

सबसे पहले बंगाली भाषा का ज्ञान/ शिक्षा देनी चाहिए। इसलिए उन्होने सन १७७८ में हुगली (कलकत्ता) शहर में बंगाली व्याकरण तयार करने के लिए छापाख़ाना निकाला। धीरे-धीरे १८ वी सदी में बंगाल में अनेक कारख़ानों का निर्माण हो चुका। सन १८०१ से १८३२ तक के काल में सिरमपोर मिशन प्रेस ने २,००,००० ग्रंथों की निर्मिती की। भारत में पहला वर्तमानपत्र कलकत्ता में जेम्स हिक्ले नामक इंग्रज व्यक्ति ने १७८० में शुरु किया, इसका नाम 'बंगाल गॅझेट' इस प्रकार था। इंग्रज सरकार की प्रशासन व्यवस्था ठिक न होने के कारण सरकार पर टिका-टिप्पणी करने के लिए इसकी निर्मिती की जा रही थी। १७८० से १७९० तक के काल में भारत में अनेक वर्तमानपत्रों की निर्मिती होने लगी। बढ़ती हुई वर्तमानपत्रों की संख्या देखकर अंग्रेज सरकार को चिंता महसूस होने लगी और उसी समय वर्तमानपत्रों के उपर नियंत्रण रखने के लिए 'प्रेस रेग्युलेशन ॲक्ट' बनाया और प्रेस सेन्सॉरशिप शुरु की।

कलकत्ता में मुद्रण उद्योग पर राजनिती और प्रशासन का प्रभाव पड गया। इसका नतीजा, मुंबई में छपी हुई पहली किताब 'कॅलेंडर ऑफ द इयर ऑफ अवर लॉर्ड' है। सन १७८९ में पहला वर्तमानपत्र ''दि बॉम्बे हेराल्ड प्रसिध्द'' हुआ। इसके बाद 'बॉम्बे गॅझेट और बॉम्बे कुरियर' निर्माण हुआ तथा १८६१ में 'बॉम्बे स्टँण्डर्ड' वर्तमानपत्र का इंग्लिश संपादक रॉबर्ट नाईट ने 'टेलिग्राफ' नाम का वर्तमानपत्र अपने कब्जे में लेकर इसका 'टाईम्स ऑफ इंडिया' में रुपांतर किया। रॉबर्ट नाईटने १८९५ में स्टेटसमन नामक वर्तमानपत्र निकाला और अक्षरों को एकत्रीकरण करने का काम किया। दुसरा महायुध्द होने के बाद मुद्रण उद्योग की रक्षा करने की दृष्टि से अलग-अलग शहरों में मुद्रकों की संघटनाएँ निर्माण होने लगी। उसी काल में 'बोहरन फाईन आर्ट लिथो वर्क्स' मुंबई, इस संस्था के स्वर्गीय परमानंद मेहरा ने मुद्रकों की राष्ट्रीय संघटना बनाने के लिए भारत भर भ्रमण किया और सन १९५३ में 'ऑल इंडिया फेडरेशन ऑफ मास्टर प्रिंटर्स' नामक संघटना निर्माण की।

इस प्रकार धीरे-धीरे भारत में मुद्रण उद्योग में परिवर्तन होने लगा। भारत में आज अनेक बड़े-बड़े शहरों में आर्ट प्रिंटींग और पब्लिशिंग युनिटस निर्माण हो चुकी है। सन १९९२ से इस विकास को बहुत ही गती आ गयी। खुला आर्थिक धोरण और आयात कर कम होने के कारण १९८९ में भारत में मुद्रण कारख़ानों की संख्या ७७,००० थी। यह संख्या १९९५ में ८६,००० हो गयी। १९८९ में मुद्रण यंत्रसामग्री तथा अन्य सुविधोओं पर ३,००० कोटी रुपये खर्च हो गए।

इस प्रकार यांत्रिक विकास के साथ-साथ आज कॉम्प्युटर लेसर, टेलिकम्युनिकेशन तंत्रों में भी बहुत ही जल्द्द प्रगती हो रही है। हमारे भारत में आज मुद्रण तंत्रज्ञान बहुत ही विकसित हो चुका है।,

२.३ क्रमिक पुस्तक का निर्माण एवं वितरण इसके बारे में कोबायशी ने बताए हुए मुख्य १२ सोपान निम्नानुसार है।

१. **लेखकों का निर्माण करना।** (Author Creates) - सबसे पहले लेखक योग्य हस्तलेख लिखते हैं।

२. **विचारार्थ हस्तलेख प्रस्तुत करना।** (Manuscript submitted) - लेखक उचित आकार में हस्तलेख लिख कर प्रकाशक के पास पेश करते हैं।

३. **संपादकों का तज्ञों के साथ संपर्क होना।** (Editors consults expert) - प्रकाशन लेखकों के द्वारा प्रस्तुत हस्तलेख की नकल विषय तज्ञों के पास भेज़कर प्रस्तुत हस्तलेख़ के बारे में विषयतज्ञों की राय क्या है, इसके बारे में विचार विमर्श करते हैं।

४. **हस्तलेख पर पुनर्विचार करना।** (Manuscript revised) - प्रकाशन प्राप्त विषय तज्ञों की राय के साथ हस्तलेख दुबारा लेखकों के पास भेज़कर उसमें सुधार के हेतू राय माँगते है।

५. **हस्तलेख प्रतिलिपी का संपादन करना।** (Manuscript copy edited) - हस्तलेख पर पुर्नविचार के बाद संपादक, आवश्यकता के मुताबिक संयोजन करके वाक्यों की और शब्दों की रचना ठ़िक करके, आशय और संज्ञाओं की रचना ठ़िक करता है। तथा आवश्यक विशेषता के साथ शीर्षक और शब्दों का आकार मुद्रित करता है।

६. **हस्तलेख के स्वरुप का मुद्रण करना।** (Manuscript cast in type) - संपादक हस्तलेख लेखकों के इजाजत के साथ मुद्रण करने के लिए भेज़ देता है।

७. **प्रामुद मुद्रण करना।** (Proofs printed) - हस्तलेख संघटित करके हस्तलेख प्रामुद मुद्रण ठिक हुवा है या नहीं यह देखकर इसमें हो गयी गलतियाँ ठिक करने के लिए लेखकों के पास भेज़े जाते है।

८. **पुस्तक मुद्रण करना।** (Book printed) - प्रामुद मुद्रण ठिक करने के बाद पुस्तक छापने के लिए मुद्रणालय भेज़ दिया जाता है।

९. **पुस्तक बँधाई।** (Book bound) - पुस्तक बँधाई दो प्रकार के साथ होती है। एक तो कठिन कागज़ गत्ते से की जाती है या कागज़ के पतले गत्ते से की जाती है।

१०. **पुस्तक विज्ञापन करना।** (Book distributed) - पुस्तक निर्माण होने के बाद, पुस्तक विक्रेता पुस्तक का विज्ञापन करता है।

११. **पुस्तक वितरण करना।** (Book distributed) - प्रस्तुत पुस्तक पूरा होने के बाद संपादक संबंधित पुस्तक विक्रेता के पास और शालाओं में और हाईस्कूलों में भेज़ देता है।

१२. **वाचकों को पुस्तक प्राप्त होना।** (Readers receive book)- संबंधित विषय के पुस्तक वाचकों को, पुस्तकालय, शालाएँ, हाईस्कूल और पुस्तक विक्रेताओं से मिलता है।[२]

२.४ पाठयपुस्तक तंत्रज्ञान में हुई तरक्की।

आज के युग में पाठयपुस्तक तंत्रज्ञान में काफी मात्रा में सुधार हो चुके है। नए जानकारी की दृष्टि से आजके पाठयपुस्तक परिपूर्ण है। शिक्षा पध्दती में अध्ययन-अध्यापन कार्य अधिक प्रभावी होने के लिए, उसमें आज सुधार आया है। पाठयपुस्तक तंत्रज्ञान से संकल्पना तथा जानकारी पर प्रभुत्व पाकर कौशल्य और अभिवृत्ती में बढ़ाव आता है। पाठयपुस्तक तंत्रज्ञान आज उन्नती के रास्ते पर है। पाठयपुस्तक तंत्र विज्ञान में निम्न तंत्रों का समावेश होता है -

१. मुद्रित साहित्य का बाह्यांग।

२. मुद्रित अनुस्थापन की पहचान।

३. सामान्य उद्दिपन के लिए मुद्रित साहित्य।

४. गणितीय क्रिया।

५. वाचक के लक्षण।

६. वाचन फल।

२.४.१. मुद्रित साहित्य का बाह्यांग -

इसमें पाठयपुस्तक का आकार, पृष्ठ संख्या, काग़ज़ का दर्जा, मुखपृष्ठ, मलपृष्ठ, मुद्रित साहित्य का प्राथमिक हिस्सा, सूची, प्रास्ताविक, कीमत आदि अंग आते हैं। यह महत्वपूर्ण अंग माने जाते हैं।

"पाठयपुस्तक बाह्यांग अंतरंग की दृष्टि से कम महत्वपूर्ण है। फिर भी उपेक्षनीय नहीं है।" इसलिए पाठयपुस्तक का बाह्यांग आकर्षक होना चाहिए। उसे देखते ही अपने समीप लेने की अभिलाषा निर्माण होनी चाहिए। बाह्यांग यह पाठयपुस्तक का चयन करने के लिए वाचक को विवश कर देनेवाला हो तथा वह पढ़ने के लिए प्रेरणा देनेवाला हो।

"पाठयपुस्तक का बाह्य रुपरंग भी उतना ही महत्वपूर्ण है। उसके प्रति पहला आकर्षण उसकी बाहरी विशेषता है। उसके आवरण एवं आकार को देखकर बच्चे उसके प्रति आकर्षित होते हैं। बच्चों के मन में पाठयपुस्तक को आपने समीप रखने की रुचित जागृत होती है। यही रुचि बच्चों को प्रस्तुत पाठयपुस्तक पढ़ने की ओर प्रवृत्त करती है।",

२.४.२.मुद्रित अनुस्थापन (Print Orientation) -

मुद्रित मजमून में पँक्तियों की लंबाई, मुद्रण संबंध विशेषताएँ, हाशिया, पृष्ठ के चारों ओर हानेवाली खाली ज़गह, मुद्रण चिन्ह, आकार, आशयक्रम, अनुच्छेद के महत्वपूर्ण हिस्से पर अवधान खिंचना आदि बातों का समावेश होता है। उपरोक्त बातें पाठयपुस्तक का आशय आकलन होने और स्मरण में रहने के लिए उपयोगी होती हैं।

२.४.३. **सामान्य उद्दिपन के लिए मुद्रित साहित्य** (Print material as nominal stimulus)-

प्रत्यक्ष पाठयपुस्तक और उसके विभिन्न अंगों के मेल से सामान्य उद्दिपक निर्माण होता है। सामान्य उद्दिपक की विशेषताओं का वर्गीकरण निम्नांकित हैं।

१. आशय (Content)

२. प्रतिपादन (Presentation)

३. संरचना (Structure)

१. **आशय** -

पाठयपुस्तक का आशय यह सामान्य उद्दिपक का महत्वपूर्ण अंग है। भाषा व्यक्ति के आदान प्रदान की माध्यम होती है, अतः छात्रों के मन में उचित अभिवृत्ती और मूल्य इनकी वृध्दि हो- ऐसा आशय चयन होना चाहिए। आशय यह घटक, उपघटक, अर्थ एवं लिखे हुए अनुच्छेद के उद्देश्यों से संबंधित होता है। पाठयपुस्तक में हर एक आशय के उद्देश्य निश्चित होते हैं।

२. **पुरोधानवाद/ प्रतिपादन** -

आशय का अर्थ स्पष्ट होने के लिए शब्दों का चयन, कल्पना चयन, संघटन, आशय का क्रम आदि बातें प्रतिपादन में आती है।

३. **संरचना** -

इस में व्याकरणात्मक संरचना, जटिल वाक्यरचना, वाक्य की लंबाई आदि बातें आती हैं।

२.४.४ **गणितीय प्रक्रिया** -

गणितीय प्रक्रिया का संबंध रसग्रहण से है। इस प्रक्रिया में ज्ञान का निर्माण जहाँ से होता है वे कृति, कार्यक्रम आते है।। गणितीय प्रक्रिया के दो प्रकार है -

१. प्रारंभिक गणितीय प्रक्रिया।

२. दुय्यम (द्वितीय) गणितीय प्रकिया।

प्रारंभिक गणितीयं प्रक्रिया में वाचन साहित्य पर दृष्टि स्थिर रखना, मुद्रित भाषा का बोलचाल की भाषा में अनुवाद करना, वाक्यरचना का पृथःकरन करना आदि बातें आती हैं।

द्वितीय गणितीय प्रक्रिया में पठित पाठयांश से आशय का तत्काल ज्ञान होना, वाक्य पढ़ने पर अपने मन में उस से संबंधित वाक्य तयार होना आदि बातें आती हैं।

इन गणितीय प्रक्रियों पर प्रगत संगठनकर्ता नमुना मार्गदर्शक, आगमन-निगमन पध्दति से इकठ्ठा किए गए साहित्य की रुपरेखा, मानसिक प्रतिमा का प्रयोग, सार बनाना, समालोचन करना, सोदाहरण स्पष्टीकरण करना, स्वाध्याय, उद्देश्य-अनुबंध, प्रश्न, आदि बातों का प्रभाव होता है।

प्रगत संगठनकर्ता -(Advance Organiser)

यह हमेशा वाचक से परिचित रहता है। और नऐ अध्ययन साहित्य से संबंधित होता है। सामान्यतः वह मुख्य संकल्पना, प्रस्तावना, सामान्यीकरण, तत्व और नियम इन पर निर्भर करता है। इस प्रकार के संघटक को स्पष्टीकरणात्मक संघटक भी कहते है। प्रगत संघटक यह सादृश्यता के रुप में हो सकता है, तथा तुलनात्मक संघटक भी हो सकता है। जिस में नई संकल्पनाएँ और पुरान्त संकल्पनाओं में तुलना की जाती है।

रचनात्मक मार्गदर्शक (Pattern Guide) यह एक साधन है -

क्रमिक साहित्य की संरचना एवं संगठन के अभिज्ञाता की निर्मिती के लिए कुछ साधन क्रमिक साहित्य में सम्मिलित किए जाते है। यें रचनाएँ चार प्रकार की होती हैं -

१. दो समान मुद्दों की तुलना।

२. अनुकूल और प्रतिकूल दृष्टिकोन में तुलना।

३. विशेष बातों की विशेषताएँ।

४. समस्या निराकरण पध्दति।

रुपरेखा - (Outline)

पाठयपुस्तक की संकल्पनाओं पर और उनके आंतर संबंधों पर प्रकाश डालने के लिए यह योजना की जाती है। क्या घटकों का आरंभ उचित ढंग से किया है? क्या शब्दों का प्रयोग, आलेख, आदि का सही प्रयोग हुआ है? इ. बातों का समावेश रुपरेखा में किया जाता है।

आगमन विधी से संगठ्न में विशेष से सामान्य की ओर इस सूत्र का प्रयोग किया जाता है। इस संगठ्न में पहले कई अवलोकित बातें रखी जाती है, और तदोपरांत सामान्यीकरण, नियम दिए जाते हैं।

अभिक्रमिक अध्ययन के तत्व (Principles of programmed learning) -

सन १९५० इ.स. में अमरिका के हावर्ड विश्वविद्यालय में मनोविज्ञान पर ख़ोज़ कार्य करनेवाले वैज्ञानिकों में से डॉ. स्किनर महोदयजी ने अभिक्रमित अध्ययन तत्व का निरुपन किया है। उन्होने इस संबंध में पाँच तत्व बताए हैं। पाठयपुस्तक का निर्माण करते समय इन पाँच तत्वों का समावेश होना चाहिए। वे पाँच तत्व निम्नांकित हैं -

१. छोटे सापानों का तत्व (Principles of small steps)

२. कृतिदर्शक प्रतिक्रियाओं का तत्व (Principles of active response)

३. तात्काल सुदृढन का तत्व (Principles of immediate confirmation)

४. स्वयं अध्ययन गति तत्व (Principles of self pricing)

५. स्वयंमूल्यांकन तत्व (The principles of self tastive)

मानस प्रतिमाओं का प्रयोग -

पाठयपुस्तक से शाब्दिक वर्णन समझने में मानस प्रतिमाओं की मदद होती है। छात्र शब्द और वाक्यों का अर्थ चित्र द्वारा भी सिखते हैं। सिखी हुई संकल्पनाओं का उपयोजन करने के लिए स्वाध्याय देकर निम्नांकित बातों का लेखा-जोखा रखने के लिए कहा जा सकता है -

१. विषय के बारे में वे क्या जानते है?

२. संकल्पना के बारे में वे क्या जानना चाहते है?

३. विषय के संकल्पना के बारे में उन्होने क्या सुना है?

सारांश अथवा पुनरीक्षण -

पाठयपुस्तक का मजमून ऐसा होना चाहिए जिसे छात्र अपनी भाषा में लिख सके। छात्रों को सार लेखन का मौका पुस्तक निर्माताओं ने देना चाहिए। सार लेखन करते समय लेखक के विचारों को अपनी भाषा में लिखना पडता है। विचार क्रमबध्द होने चाहिए। विचारों को एकत्रित

करते समय वाक्यरचना में परिवर्तन हो सकता है। विवेचन करते समय प्रयुक्त किए गये अलंकार, विशेषन की आवश्यकता न होने पर हटाए जा सकते है।

दृष्टांत -

पाठयपुस्तक में दृष्टांतों की आवश्यकता होती हे। पाठयपुस्तक में उनका महत्व विषद करते हुए लीला पाटीलजी लिखती है - ''छात्रों में व्यक्तिगत भेद रहते है। अनुभव कक्षा, आकलन क्षमता, कल्पनाशक्ती और धारणक्षमता इन सभी बातों में एक ही कक्षा में पढ़नेवाले सभी छात्रों में भेद होताही है। इसलिए यदि शाब्दिक वर्णन सजीच करना हो तो दृष्टांतों की आवश्यकता होती है।''[४]

दृष्टांत निम्न भूमिकाएँ निभाते हैं -

१. अवधान भूमिका (An attention role)

२. स्पष्टीकरणात्मक भूमिका (An explainative role)

३. धारणात्मक भूमिका (A retentional role)

क्रमिक पाठयपुस्तक में होनेवाले दृष्टांत छात्रों की अभिरुची बढ़ाने में सहाय्यक होते हैं। चित्र, आरेख, व्यंगचित्र, फलक इनकी सहायता से विषय अच्छी तरह से समझता है।

स्वाध्याय (Exercises) -

पाठयपुस्तक के प्रत्येक पाठ के अन्त में स्वाध्याय के प्रश्न रहते हैं। स्वाध्याय के प्रश्नों में विविधता होती है। उदा. के तौर पर कुछ प्रश्न विचार प्रवर्तक, कुछ उपयोजनात्मक स्वरुपक तो कुछ वस्तुनिष्ठ आदि। इस से स्वयं अध्ययन की प्रवृत्ती का विकास होता है।[५]

भाषा शिक्षा का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य, विद्यार्थीयों में स्वाध्याय की प्रवृत्ति विकसित करता है। पाठयपुस्तक का अध्यययन स्वाध्याय के विकास की ओर पहला महत्वपूर्ण कदम है। इससे विद्यार्थियों को अन्य पुस्तके पढ़ने की प्रेरणा भी मिलती है।

उद्देश्य अनुबंध प्रश्न (Adjunct questions) -

अध्ययन-अध्यापन में प्रश्नों का कार्य अनन्यसाधारण हैं। प्रश्न विचारों की वृध्दि करते है। नव कल्पनाओं की खोज अध्ययन की गहराई एवं विषय क्षेत्र बढ़ाना, पूर्वज्ञान और नऐ ज्ञान में संबंध स्थापित करना, अध्यापन पर छात्रों का ध्यान आकर्षिक करना, प्राप्त किए हुए ज्ञान का संगठन करना, विश्लेषण करना, पठित आशय मन में दृढ करना, पठित पाठ्यांश का मूल्यांकन करना, छात्रों से संवाद स्थापित करना, छात्रों को अध्ययन के लिए प्रोत्साहित करना आदि कई दृष्टियों से प्रश्न महत्वपूर्ण होते है।

पाठयपुस्तक तकनिकी में प्रश्नों का विचार निम्न दृष्टिकोन से किया जाता है। -

१. **आरंभिक एकत्रित प्रश्न** - इस प्रकार के प्रश्न पाठ के आरंभ में ही दिए जाते है।

२. **बीच बीच में आनेवाले प्रश्न** - इस प्रकार के प्रश्न पाठयपुस्तक में बीच बीच में दिए जाते है। पाठ में दी गई जानकारी में संबंध बनाए रखना इनका उद्देश्य होता है।

३. **उद्देश्य अनुबंध प्रश्न** -पाठयपुस्तक में आए अनेक मुद्दों में रखे हुए प्रश्न इस वर्ग में आते है।

४. **संकलित जानकारी के बाद दिए प्रश्न** - इस प्रकार के प्रश्न पाठयपुस्तक में पाठ के अंत में दिए जाते है। इस प्रकार उपर्निदिष्ट प्रश्न पाठयपुस्तक में सम्मिलित किए जाते है। उपरोक्त सभी योजनाएँ गणितीय प्रक्रिया सुलभ बनाती है।

२.२.५. **वाचक के लक्षण** -

व्यक्ति संपन्नता का हेतू साध्य करने के लिए वाचन यह एक प्रभावी साधन माना जाता है। वाचन से तात्पर्य यह है कि केवल अक्षरों का वाचन नहीं अपितु मुद्रित अक्षरों के मदद से विचार करना है।

"लिपिबध्द अक्षरों का तब तक कोई मूल्य नहीं जब तक वे विचारों का प्रतिनिधित्व नहीं करते। यह बात ठिक वैसे ही है जैसे ध्वनियों का कोई मूल्य नहीं जब तक वे विचारों का संचार न करती। इसलिए यह कहना उचित ही होगा कि ध्वनियाँ और लिपिबध्द अक्षर अर्थ के बिना व्यर्थ है। अतः वह क्रिया जिस में शब्दों के साथ अर्थ ध्वनि भी निहीत हो, वाचन कहलाती है। दूसरे शब्दों में वाचन के अंतर्गत लिपि को पढ़ना उतना आवश्यक नहीं जितना पढ़कर उसे समझना और शब्दों का अर्थ ग्रहण करना।" इस प्रकार वाचन की परिभाषा ऐसे की जा सकती है कि "पूर्ववत ध्वनियों के प्रतीक लिपिबध्द शब्दों का पढ़कर अर्थ ग्रहण करने की प्रक्रिया को वाचन कहते है।"

वाचक के लक्षणों का पाठयपुस्तक तकनिकी के दृष्टि से विचार करते समय दो बातों का विचार करना पडता है।

१. **बौध्दिक पध्दति -**

जानकारी की खोज़, जानकारी की अभिव्यक्ती, जानकारी इकठ्ठा करना और उसे समयोचित प्रयोग में लाना इसे बौध्दिक पध्दति कहा जाता है। यह पध्दति सोचनेका, जानकारी प्राप्त करनेका, समस्या छुडानेका, एक आसान मार्ग है। बौध्दिक पध्दति से तात्पर्य यह है कि यह वाचक द्वारा व्यक्त की गई प्रवृत्ति है। वाचक के बौध्दिक पध्दति के तत्व निम्नानुसार हैं -

१. खास जानकारी का पठन संदर्भ के साथ और संदर्भ के बगैर करना।

२. पूरी तरह से जानकारी लेने के बजाय विभिन्न सोपानों पर जानकारी लेना।

३. जटिल वाक्यरचना अंगीकृत करने के बजाय सीधी सीधी वाक्यरचना को प्रमुखता देना।

४. जानकारी खास शब्दों में ही ध्यान में रखना।

५. अनेक विचारों में से सामान्य निर्णय लेना।

२. **बौध्दिक दांवपेच -**

क्रमिक पाठयपुस्तकों में वाचन से संबंधित कई बौध्दिक दावपेंच हैं।

१. कुछ वाचक पाठयपुस्तक के कुछ ही हिस्से पर ध्यान केंद्रित करते हैं। और अपने संबंधित जानकारी इकठ्ठा करते है।

२. दूसरा तंत्र परिणामकारक अध्ययन से संबंधित है। इस में वाचक जानकारी मन ही मन में रखता है।

३. वाचक क्रमिक पुस्तकों की सहायता से पूर्वज्ञान पर आधारित अध्ययन करता है। नई जानकारी प्राप्त करते समय वह संबंधित पूर्वज्ञान याद करता है।

४. जानकारी ग्रहण की जाती है, और सहजता से वह याद आती है।

बौध्दिक दावपेंच, अध्ययन सुलभ बनाते है। इसलिए वाचक को बौध्दिक तंत्रों का प्रयोग करते समय सावधानी से करना चाहिए।

२.२.६ **वाचन फल -**

किसी भी अनुभव द्वारा मनुष्य के वर्तन में परिवर्तन हो जाता है। अंतिम वर्तन के जरिए कौनसी बात स्पष्ट हो जानेवाली है यह बताया जा सकता है - यही अध्ययन फल कहलाता है।

वाचन द्वारा वर्तन में होनेवाला परिवर्तन ज्ञानात्मक, भावात्मक, एवं क्रियात्मक होता है। अच्छे साहित्य के पठन से मनुष्य बहुश्रुत बनता है। सोचने की निश्चित दिशा मिलती है। ज्ञान कक्षा विस्तृत बनती है। वाचन आत्म खोज़ के लिए प्रवृत्त करता है। वाचन विचारों को चेतानवी देता है। जिस से ज्ञान में वृध्दि होती है। साथ ही साथ अनुभव क्षेत्र विस्तृत होता है। वाचन फल निम्नांकित क्षेत्रों में दिखाई देता है।

१. **बोधात्मक क्षेत्र -**

१. **ज्ञान** - इस स्तर पर स्मरण पर जादा जोर दिया जाता है। पाठ पढ़ने पर नियम तत्व, घटना, कठिन शब्दों के अर्थ, पात्रों के नाम बताना आदि बातें इस में आती है।

२. **आकलन** - सार बताना, मध्यवर्ती कल्पना बताना, प्रश्नों के उत्तर देना, आदि बातें इस में आती है।

३. **उपाययोजना** - प्राप्त ज्ञान का असल में प्रयोग करना उपयोजन कहलाता है। पठन से मुहावरें, कहावतें, अलंकार इ. का आकलन होता है। जिससे वाचक निबंध लेखन में उनका प्रयोग करता है, यही उपयोजन है।

४. **पृथःकरण** - वाचन के बाद विविध घटकों का आपसी संबंध बताना, परिणाम विषद करना, इस प्रक्रिया का समावेश पृथःकरण में होता है।

५. **संश्लेषण** - वाचन के बाद ढ़ाँचे के आधार पर कहानी बनाना, निबंध लेखन करना, इ. बातें इसमें आती है।

६. **मूल्यमापन** - किसी कथानक में उचित क्या है और अनुचित क्या है, यह जब कहा जाता है, तब उसे मूल्यमापन कहते है। आकलन, पृथःकरण, संश्लेषण आदि सभी क्रियाओं का प्रयोग मूल्यमापन करते समय किया जाता है।

२. **भावात्मक क्षेत्र -**

इस क्षेत्र में वृत्ति, अभिरुचि, रसग्रहण क्षमता आदि घटक आते हैं।

१. **अवधान** - वाचन के बाद भिन्न-भिन्न उद्दिपकों में क्या भेद है, यह पहचान कर विशिष्ट उद्दिपक पर ध्यान देने की क्षमता इस स्तर पर वाचक में आ जाती है।

२. **प्रतिसाद** - वाचन से अगर किसी एक विषय पर अवधान केंद्रित होने लगता है, तो उसके आगे प्रतिसाद यह सिढ़ी आती है।

३. **मूल्यनिर्णय** - वाचन से वर्तन दिशा धीरे-धीरे निश्चित होती है। वाचक की ओर से विशिष्ट मूल्यों का स्वीकार किया जाता है।

४. **संगठन** - वाचन से भिन्न-भिन्न मूल्यों का संगठन होता है और वाचक की वृत्ति आकार लेती है। विशिष्ट वृत्ति दृष्टिकोन वर्तन के लिए एक दिशा दर्शक मार्गदर्शक ठहरता है।

५. **मूल्यसमूह** - वाचन से मूल्यों का समूह वाचक का वर्तन नियंत्रित करता है। उचित निर्णय लिये जाते हैं।

३. **क्रियात्मक क्षेत्र** -

इस क्षेत्र के उद्देश्यों में कारक कौशलों का समावेश होता है। इस में निम्न घटक आते हैं।

१. **अनुकरण** - इस स्तर पर दूसरों के वृत्ति का निरीक्षण किया जाता है, और उसी का अनुकरण होता है।

२. **क्रिया कौशल** - इसमें निरीक्षण तथा साथ ही सूचनाओं को अमल में लाया जाता है।

३. **अचुकता** - इसमें कृति में कौशल प्राप्त होने पर कृति सफायदार होने लगती है। गलतियाँ कम होती है।

४. **संधीकरण** - इसमें कृति में होनेवाली विविध गतिविधीयों में समन्वय रखा जाता है।

५. **स्वाभाविकीकरण** - इसमें कौशल पर पूरा अंमल आने पर कृति में सहजता आती है। उपरोक्त वर्गीकरण के द्वारा वाचन फल का क्रमबध्द वर्णन होता है।

२.५ उपसंहार -

प्रस्तुत अध्याय में प्रस्तावना, मुद्रण तंत्रज्ञान का इतिहास, कोबायसी ने बताए हुए मुद्रण तंत्रज्ञान के १२ सोपान, पाठयपुस्तक तंत्रज्ञान में हुई तरक्की, पाठयपुस्तक बाह्यांग, मुद्रित अनुस्थापन, सामान्य उद्दिपन के लिए मुद्रित साहित्य, गणितीय क्रिया, वाचक के लक्षण और वाचन फल आदि मुद्रण तंत्रज्ञान और पाठयपुस्तक तंत्रज्ञान के बारे में जानकारी ली गई है। अगले अध्याय में समस्या से संबंधित साहित्य का समालोचन किया है।

अध्याय दुसरा

संदर्भ सूची

१. कोल्हापूर जिल्हा मुद्रक संघाचे मुद्रण वार्ता, अंक दुसरा १५ ऑक्टोबर, १९९८.

२. Thomas, R.M. and Kobayashi V.N. Educational Technology : Its Creation Development and Cross Cultural Transfer, Volume 4, New York : Pergaman Press, 1987, Page 148-149.

३. भाटिया, एम.एम., नारंग सी.एल. 'आधुनिक हिन्दी शिक्षण विधियाँ', लुधियाना : प्रकाश ब्रदर्स, १९८७ पृष्ठ १७०-२३१.

४. पाटील लिला, आजचे अध्यापन, पुणे - श्री विद्या प्रकाशन, द्वितीय आवृत्ती, १९८२ पृष्ठ २१२ (अनुवाद).

५. वास्कर आनंद - 'आशययुक्त अध्यापन पध्दति', पुना : मेहता पब्लिशिंग हाउस, पृष्ठ ४५.